THE TIMES OF INDIA

Date:06-07-22

Greening Better

NGT is a vital cog in environment regulation but it needs a performance review & better staffing.

TOI Editorials

The frequency with which National Green Tribunal orders are being appealed in Supreme Court and high courts should prod GoI to a review. In a recent order, SC critiqued NGT for "mechanical and pre-drafted" orders after a construction firm complained that it wasn't heard before a hefty penalty of Rs 40 crore was imposed on it. The tribunal with exclusive jurisdiction over environmental protection and pollution control matters has arguably not lived up to its billing. Some months ago, another SC bench had frowned upon NGT's tendency to set up expert committees, noting that its adjudicatory functions cannot be delegated in this manner.

After the first two decades of liberalisation, tribunals have lost favour. In NGT's case it was expected to quickly settle a growing number of environment-related matters pending at constitutional courts and tap into expertise on environmental law available in India. And given rampant ecological degradation and related localised grievances, such an adjudicatory body staffed with judicial and technical experts having significant powers came with a lot of promise. Though a number of NGT rulings have held the field, some of its big-bang orders – de-registering 10-year-old diesel vehicles, bans on firecrackers, RO-water purifiers and sand-mining – have had minimal impact in the absence of political support. NGT has ended up as another casualty of the messy "development vs environment" debate, which has no easy answers.

There are staffing issues. Against NGT Act's mandate to have 10-20 judicial and expert members each, NGT presently has seven judicial and six expert members. In 2019, these numbers were down to four and two respectively. Fewer members make two extreme scenarios likely: backlogs and hasty disposals. Not surprisingly, stays against NGT orders clearing or blocking projects are routinely secured from SC and HCs, eroding NGT's credibility.

NGT boasted of a high disposal rate even during the 2021 pandemic year courtesy virtual hearings but critics say the data doesn't speak for the quality of orders, an assessment that appears to have caught SC's eye. NGT was one of the pioneers of virtual hearings, but lawyers say the lack of physical interface has affected their ability to make a more pressing case before the bench. NGT must get the support it needs from GoI but it must also do more to clean up its act.

THE ECONOMIC TIMES

Date:06-07-22

Now, to Ensure That The Plastic is Binned

ET Editorials

Beginning July 1, a ban on a slew of single-use plastic (SUP) products — identified to have low utility but high littering potential — became operational. This is in addition to the earlier ban on lightweight plastic bags (of thickness less than 75 microns) and non-woven plastic (less than 60 gm per sq m) that came into effect from September 1, 2021. This is the first nationwide effort focused on supply-side interventions to tackle plastic waste. GoI has done a good job on the regulatory front by amending the Plastic Waste Management (PWM) Rules and ensuring robust extended producer responsibility (EPR) norms. But the real test, as always, will be in implementation and ensuring compliance. Over the next six months, GoI should step up outreach, and keep track of implementation bottlenecks and compliance challenges.

Implementation and compliance are major challenges. Past efforts by states have been a mixed bag marked by patchy compliance. GoI must continue to work with state governments, local authorities, businesses and civil society to improve awareness, and address operational challenges. The development and use of alternatives must be prioritised. With the global agreement on plastics in the works, this will be a growth area that will provide opportunities. Globally, SUPs account for a third of all plastic produced and for the bulk of the 130 million-odd metric tonnes of discarded plastic in 2019. India is among the top 100 SUP waste generators.

Despite the pandemic-driven disruption and massive uptick in plastic waste generation, GoI has kept to the schedule. Now, the focus must be to ensure the accrual of benefits of reduced SUP use, such as lower fossil fuel consumption and emissions, as well as of river and marine pollution.

दैनिक भास्कर

Date:06-07-22

युवा भारत स्वास्थ्य व शिक्षा पर निवेश बढ़ाए

संपादकीय

केंद्र की अंतर मंत्रालय समिति ने सरकार को मध्याह्न भोजन स्कीम से जुड़ी एक सलाह दी है। इसमें कहा गया है कि अनिवार्य रूप से प्रोटीन और मिनरल्स देने के लिए मध्याह्न भोजन और आंगनवाड़ी योजनाओं में अंडे, मेवे और फलियां देने का प्रावधान किया जाए। यूएनएफडीए की परिभाषा के अनुसार डेमोग्राफिक डिविडेंड यानी सांख्यिकी लाभ तब मिलता है, जब किसी देश के क्रियाशील (15-64 वर्ष) आयु के लोगों की संख्या गैर-क्रियाशील वर्ग (14 वर्ष से कम और 65 से

ज्यादा) की संख्या से ज्यादा होती है। सन् 2018 से अगले 37 साल तक भारत को डेमोग्राफिक डिविडेंड (युवा शक्ति का लाभ) मिलना है। इस साल देश की औसत आयु 29 साल है। यह वह काल है जिसमें देश के बच्चे स्वस्थ और शिक्षित होने चाहिए ताकि वे आर्थिक विकास में अपनी भूमिका निभा सकें। जापान, चीन, दक्षिण कोरिया आदि ने अपने यहां इस काल की शुरुआत से ही पोषण, स्वास्थ्य और शिक्षा पर जबरदस्त खर्च किया, जिसका लाभ भी मिला। जापान में इस काल के पहले दस वर्षों में पांच साल जीडीपी विकास दर दहाई के आंकड़े में रही, बाकी पांच साल में दो साल आठ फीसदी। चीन में यह काल सन् 1994 में शुरू हुआ और पहले आठ वर्षों में विकास दर दहाई में और कुल 18 साल में दो वर्ष छोड़कर लगातार आठ फीसदी से ऊपर रही। भारत के बजट में शिक्षा पर खर्च, जो सन् 2015 में 3.8% था, घटकर 3.4% हो गया। वर्ष 2017-18 में बेरोजगारी दर 46 साल में सर्वाधिक आंकी गई। कोरोना ने रही-सही कसर पूरी कर दी। आज शिक्षा-स्वास्थ्य में निवेश करने की जरूरत है, ताकि अगले 20 वर्षों में युवा देश के विकास में इतना योगदान कर दें कि 2055 में वृद्ध होते भारत को कोई चिंता न रहे।

Date:06-07-22

दूसरा मौका नहीं देंगे सिंगल यूज प्लास्टिक के दुष्परिणाम

डॉ. अनिल प्रकाश जोशी, (पद्मश्री से सम्मानित पर्यावरणविद्)

दुनिया भर में सिंगल यूज प्लास्टिक को लेकर गंभीरता तो आई है। इस पर एक बड़े प्रतिबंध का समय भी आ चुका था। प्लास्टिक के उपयोग के नाम पर सारी सीमाओं को पार किया जा चुका था। विकल्प के अभाव में भी इस पर पूर्ण प्रतिबंध देश-दुनिया के लिए बहुत महत्वपूर्ण कदम माना जाएगा। वैसे भी लंबे समय से सारे नियमों को ताक पर रखकर ही इसका बदस्तूर उपयोग बदस्तूर जारी है। यहां यह भी याद रखना चाहिए कि दुनिया के कई देशों ने इसको पहले ही प्रतिबंधित कर दिया है। ऐसे 16 देश हैं- जिनमें यूके, ताइवान, अमेरिका शामिल हैं। इसके अलावा करीब 127 देश एक ऐसा कानून बनाने की तैयारी में हैं, ताकि प्लास्टिक के उपयोग को पूरी तरह से बंद किया जा सके। और भी कई तरह के प्रावधान तैयार किए जा रहे हैं, जिनमें हैवी टैक्सेशन भी शामिल है। कुछ बड़े कॉर्पोरेट हाउस ने भी गंभीरता समझते हुए इसके उपयोग पर पूर्ण प्रतिबंध लगाया है। इनमें मैकडोनाल्ड, स्टारबक्स जैसी बड़ी कंपनियां भी शामिल हैं।

आज दुनिया में 9 अरब टन प्लास्टिक मौजूद है। कई जगहों पर प्लास्टिक के पहाड़ बन गए हैं। इसमें कोई अतिशयोक्ति भी नहीं। देश में ऐसा कोई शहर नहीं बचा है, जहां प्लास्टिक कचरे के वैसे पहाड़ न बन चुके हों। इनका स्थानीय प्रकृति व प्रवृत्ति को बदलने में पूरा योगदान है। अजीब बात ये भी है कि अपने देश की नई आती पीढ़ी प्लास्टिक कल्चर को ज्यादा जानती है और उसके साथ तालमेल बना भी चुकी है। वह प्लास्टिक प्रयोग में ज्यादा असहज नहीं दिखाई देती। जब प्लास्टिक नई सभ्यता का हिस्सा बन चुका हो तो इससे मुक्त होने के लिए कड़े कदमों की जरूरत तो होगी ही। प्लास्टिक पर पूर्ण प्रतिबंध आज की जरूरत है। दुनिया में जितना भी प्लास्टिक निकलता है, उसका 9% से ज्यादा रिसाइकिल भी नहीं होता और वह अंततः तमाम तरह के रास्तों से खेतों से लेकर समुद्र तक पहुंच जाता है। अपने देश के भी हालात कुछ ऐसे ही हैं। सन् 2021 में करीब 41000 टन प्रतिवर्ष की दर से कुल प्लास्टिक उत्पादित किया गया था। इसमें करीब 10 से 15% वाला वह प्लास्टिक है, जिसे हम सिंगल यूज प्लास्टिक कह सकते हैं। इस तरह यह 3

किलो प्रति व्यक्ति था, जिसमें 10 से 35% अकेला सिंगल यूज प्लास्टिक था। आज प्लास्टिक उत्पादन करने वाली करीब 683 इकाइयां हैं। देश में कुल प्लास्टिक क्षमता 2.4 लाख टन है। इतनी अपार मात्रा में अगर प्लास्टिक हमारे बीच में आ रहा है और उसका भी कोई सीधा निराकरण ना हो रहा हो तो यह बात मानकर मानिए कि यह मात्र खेतों से समुद्रों तक ही नहीं होगा, बल्कि हमारे शरीर मे भी पैठ बना चुका होगा। अभी कुछ नए अध्ययन सामने आए हैं, जिनके अनुसार 1923 के डेंटल ब्रश या प्लास्टिक के उत्पाद आज भी यथावत हैं। वे आज तक भी सड़े-गले नहीं हैं और हमारे बीच में कहीं ना कहीं मौजूद है। इतना ही नहीं अपने देश में भी देखिए, करीब 8 मीट्रिक टन प्लास्टिक सीधे समुद्रों में चला जाता है। अगर यही स्थिति रही तो 2050 तक समुद्र भी शायद प्लास्टिक से पटे होंगे। यह भी समझ लेना चाहिए कि भारत दुनिया के उन देशों में है, जिनके पास बहुत बड़ा क्षेत्र समुद्र व समुद्र तटों का है, ऐसे में हमें शायद अतिरिक्त सावधानी बरतनी चाहिए, क्योंकि नदियों-नालों के माध्यम से शहरों का प्लास्टिक सब समुद्र में ही जा रहा है। समुद्र में पहले ही चार सौ डार्क जोन बन चुके हैं। पूरे समुद्र के पारिस्थितिकी तंत्र को यह खराब कर चुका है। माइक्रो-प्लास्टिक्स- जो डीग्रेड होने के बाद आता है- कई तरह के खतरों को पैदा कर चुका है। समुद्र में मछलियों के माध्यम से हो और चाहे खेतों से, यह हमारी खेती-बाड़ी का हिस्सा भी बन चुका है।

भारत सरकार ने पिछले अक्टूबर में तय किया था कि जुलाई 2022 के बाद इस पर पूरी तरह प्रतिबंध लग जाएगा। इस प्रतिबंध की शैली एनवायरमेंटल प्रोटक्शन एक्ट के अंतर्गत मानी जाएगी। इसके उलंघन का सीधा मतलब है संविधान के सेक्शन 15 का उल्लंघन।

दैनिक जागरण

Date:06-07-22

खाद्य सुरक्षा पर प्रतिबद्धता

संपादकीय

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून के क्रियान्वयन को लेकर जारी राज्यों की रैंकिंग में ओडिशा का शीर्ष स्थान पर आना उन राज्यों के लिए सबक बनना चाहिए, जो अपेक्षाकृत समर्थ और संपन्न माने जाते हैं। ओडिशा ने पहला स्थान हासिल कर यही प्रदर्शित किया कि वह निर्धन वर्गों के कल्याण के लिए कहीं अधिक प्रतिबद्ध है। इस रैंकिंग में दूसरा स्थान अर्जित कर उत्तर प्रदेश ने फिर से यह सिद्ध किया कि सबसे अधिक आबादी वाला राज्य होने के बाद भी वह जनकल्याणकारी योजनाओं को सही तरह से लागू करने में कहीं अधिक सक्षम है। उत्तर प्रदेश ने अन्य जन कल्याणकारी योजनाओं को लाभार्थियों तक पहुंचाने में एक मिसाल कायम की है। वास्तव में इसी कारण योगी सरकार सत्ता में वापसी करने में सफल रही। उत्तर प्रदेश के बाद तीसरा स्थान आंध्र प्रदेश ने हासिल किया है, लेकिन उसका पड़ोसी और उससे ही अलग होकर बना तेलंगाना 12वें स्थान पर है। इसके बाद महाराष्ट्र, बंगाल और राजस्थान का नंबर दिख रहा है। नि:संदेह पंजाब का 16वें स्थान पर आना भी चकित करता है। इसी तरह इस पर भी हैरानी होती है कि पंजाब से भी पीछे हरियाणा, दिल्ली, छत्तीसगढ़ और गोवा दिख रहे हैं।

यह समझना कठिन है कि आखिर हरियाणा, दिल्ली, गोवा जैसे छोटे और संपन्न राज्य वैसा कुछ क्यों नहीं कर सके जैसा ओडिशा, उत्तर प्रदेश और आंध्र प्रदेश करने में सफल रहे? वास्तव में यही सवाल केरल के संदर्भ में भी उठता है, जो 11वां स्थान हासिल कर सका। आखिर राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून के क्रियान्वयन में जैसी प्रतिबद्धता ओडिशा, उत्तर प्रदेश और आंध्र ने दिखाई वैसी अन्य राज्य क्यों नहीं दिखा सके? वास्तव में यह इस योजना के प्रति प्रतिबद्धता का ही प्रमाण है कि विशेष श्रेणी यानी पूर्वोत्तर, हिमालयी एवं द्वीपीय राज्यों में त्रिपुरा, हिमाचल और सिक्किम ने पहला, दूसरा और तीसरा स्थान अर्जित किया। इन राज्यों ने लाजिस्टिक की समस्याओं के बाद भी जिस तरह सामान्य श्रेणी के राज्यों के साथ अच्छी प्रतिस्पर्धा की, उसकी सराहना की जानी चाहिए। इसी के साथ यह आशा की जानी चाहिए कि आने वाले समय में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून के क्रियान्वयन में विभिन्न राज्यों के बीच स्वस्थ प्रतिस्पर्धा कायम होगी। वास्तव में यह प्रतिस्पर्धा अन्य जन कल्याणकारी योजनाओं में भी दिखनी चाहिए। यह खेद की बात है कि कई राज्य संकीर्ण राजनीतिक कारणों से केंद्र सरकार की जनकल्याणकारी योजनाओं को लागू करने में न केवल ढिलाई का परिचय देते हैं, बल्कि कई बार तो उन्हें अपने यहां अमल में ही नहीं लाते। यह किसी से छिपा नहीं कि एक देश-एक राशन कार्ड योजना सभी राज्यों में तब लागू हो सकी, जब सुप्रीम कोर्ट ने हस्तक्षेप किया।

जनसत्ता

Date:06-07-22

संतुलित विकास की चुनौती

प्रमोद भार्गव

केन-बेतवा नदी जोड़ अभियान के बाद उत्तराखंड में देश की पहली ऐसी परियोजना पर काम शुरू हो गया है जिसमें हिमनद (ग्लेशियर) की एक धारा को मोड़ कर बरसाती नदी में पहुंचाया जाएगा। यदि यह परियोजना सफल हो जाती है तो पहली बार ऐसा होगा जब हिमालय का बर्फीला पानी किसी बरसाती नदी में सीधे बहेगा। हिमालय की अधिकतम ऊंचाई पर नदी जोड़ने की इस महापरियोजना का सर्वेक्षण शुरू हो चुका है। परियोजना की विशेषता यह है कि पहली बार उत्तराखंड के गढ़वाल मंडल की एक नदी को कुमाऊं मंडल की नदी से जोड़ कर बड़ी आबादी को पानी मुहैया कराया जाएगा। इससे एक बडे भू-भाग को सिंचाई के लिए भी पानी मिलेगा। लेकिन इस परियोजना के लिए जिस सुरंग का निर्माण कर

पानी नीचे लाया जाएगा, उसके निर्माण में हिमालय के शिखर-पहाड़ों को खोद कर सुरंग और नाले बनाए जाएंगे। इसके लिए मशीनों से पहाड़ों को छेदा जाएगा, जो हिमालय के पारिस्थितिकी तंत्र के लिए नया बड़ा खतरा बन सकता है। बांधों के निर्माण से हिमालय क्षेत्र पहले ही खतरे में है और इस कारण कई बार पहाड़ी इलाकों में बाढ़, भू-स्खलन और केदरनाथ प्रलय जैसी आपदाओं का सामना पड़ा है।

उत्तराखंड के बागेश्वर जिले में पिंडारी हिमनद है। यह हिमनद दो हजार दो सौ मीटर की ऊंचाई पर एक बड़ा जलग्रहण क्षेत्र है। इसी से पिंडर नदी निकलती है। यह हिमनद लगभग तीन किलोमीटर लंबा और तीन सौ पैंसठ मीटर चौड़ा है। इसमें हमेशा पांच करोड़ लीटर पानी रोजाना रहता है। पानी की यही क्षमता इसे एक बड़ी नदी का रूप देती है। पिंडारी हिमनद भले ही कुमाऊं मंडल में पड़ता है, लेकिन पिंडारी हिमनद से मुक्त होते ही पिंडारी नदी गढ़वाल मंडल के चमोली जिले में प्रवेश कर जाती है। यहां से एक सौ पांच किलोमीटर की दूरी तय कर यह नदी कर्णप्रयाग पहुंच कर अलकनंदा में मिल जाती है। यहीं कुमाऊं मंडल के बागेश्वर जिले की बैजनाथ घाटी में कोसी नदी बहती है, जो एक बरसाती नदी है। इसी नदी में हिमनद का बर्फीला पानी एक हजार आठ सौ मीटर की ऊंचाई पर एक लंबी सुरंग बना कर छोड़ा जाएगा। बताया जाता है कि पिंडर नदी के पानी की उपयोगिता कर्णप्रयाग तक लगभग नहीं है। इसलिए यहां से महज बीस लाख लीटर पानी रोजाना निकाल कर एक बहुत बड़े भू-भाग की आबादी को पेयजल और सिंचाई के लिए मुहैया करवाया जाएगा।

दरअसल, नैनीताल और अल्मोड़ा जिले में पेयजल की व्यवस्था कोसी नदी के पानी से होती है। इन दोनों जिलों में पेयजल की आपूर्ति के लिए नदी की सतह में पंप लगाए गए हैं, बावजूद इसके पानी की कमी बड़ी समस्या बनी हुई है। दावा किया रहा है कि इस परियोजना के माध्यम से पिंडर नदी का पानी कोसी में प्रवाहित हो जाएगा, तो दोनों जिलों की आबादी को जीवनदान मिल जाएगा। लेकिन इस कथित तात्कालिक लाभ के बहाने जो पिंडर नदी समूचे देश की आबादी के लिए धर्म और संस्कृति का हिस्सा बनी हुई है, उसके अस्तित्व पर संकट गहरा जाएगा। पिंडर घाटी की धार्मिक, सांस्कृतिक महिमा और इसकी सुंदरता का चित्रण यहां के लोकगीतों में भी मिलता है। पिंडर को अधिक दूरी से भी देखें, तो इसकी गहरी तलहटी इतनी निर्मल व पारदर्शी है कि इसमें पड़े पत्थर साफ दिखाई देते हैं।

परियोजना के रचनाकारों का यह भी दावा है कि इस हिमनद का पानी गंगा की तरह नैसर्गिक औषधीय गुणों से युक्त है। अतएव इसके पानी को पीने से लोग तो नीरोगी रहेंगे और इससे सिंचित फसलें भी पौष्टिक होंगी। काया को नीरोगी रखने वाले इस जल की उपयोगिता को हमारे ऋषि-मुनियों ने हजारों साल पहले समझ लिया था। इसकी महिमा वरदान बनी रहे, इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मृत्यु शैया पर लेटे व्यक्ति को गंगाजल पिलाने का नियम बनाया गया। हालांकि अब जागरूकता के अभाव में इसे एक परंपरा का स्वरूप दे दिया गया है। हिमालय की कोख से गंगा निकलती हो या पिंडर, इनका पानी इसलिए शुद्धतम माना जाता है क्योंकि इनमें गंधक जैसे खनिजों की मात्रा सर्वाधिक है। यही कारण है कि पानी सदा पीने लायक बना रहता है। इनका पानी खराब नहीं होने के कारण वैज्ञानिक भी हैं। खासतौर से गंगा के पानी में 'बैट्रिया फोर्स' नामक जीवाणु पाया जाता है, जो पानी के अंदर रासायनिक क्रियाओं से उत्पन्न होने वाले अवांछनीय पदार्थों को निगलता रहता है। नतीजतन जल की शुद्धता बनी रहती है। इनके अलावा भी कुछ भू-गर्भीय रासायनिक क्रियाएं भी इस पानी को शुद्ध बनाए रखने का काम करती हैं। ये पानी में हानिकारक कीटों को नहीं पनपने देती हैं। बावजूद इसके यह पानी हिमालय से उतर कर नीचे आता है तो नदियों में बहाई जा रही गंदगी के चलते दूषित होने लग जाता है। ऐसे में पिंडर का पानी जब कोसी में बहेगा, तब यह जल निर्मल नहीं रह जाएगा।

हम जानते हैं कि पहले से ही विकास के नाम पर जल, जंगल और जमीन की बड़े पैमाने पर बर्बादी हुई है। इसलिए इस तरह की आशंकाएं पैदा होना स्वाभाविक है कि ऐसी परियोजना से पिंडर हिमनद और पिंडारी नदी कहीं अपना अस्तित्व ही न खो दें। दरअसल, हर बार मानसून में हिमाचल और उत्तराखंड के पहाड़ी जिलों में भू-स्खलन, बादल फटने और बिजली गिरने की घटनाएं निरंतर सामने आ रही हैं। पहाड़ों के दरकने के साथ छोटे-छोटे भूकंप भी देखने में आ रहे हैं। उत्तराखंड और हिमाचल में बीते सात साल में एक सौ तीस बार से ज्यादा छोटे भूकंप आए, जो रिक्टर पैमाने पर तीन से कम तीव्रता होते हैं, इसलिए इनका तात्कालिक बड़ा नुकसान देखने में नहीं आता, लेकिन इनके कंपन से दरारें बढ़ती जा रही हैं। नतीजतन भू-स्खलन और चट्टानों के खिसकने जैसी आपदाएं भी बढ़ रही हैं। ये छोटे भूकंप हिमालय में किसी बड़े भूकंप के आने का स्पष्ट संकेत माने जाते हैं। बड़े भूकंप जो रिक्टर पैमाने पर छह से आठ तक की तीव्रता के होते हैं, उनसे पहले छोटे-छोटे भूकंप आते हैं।

हिमाचल और उत्तराखंड में जल विद्युत परियोजनाओं के लिए बनाए जा रहे बांधों ने पारिस्थितिकी तंत्र को भारी नुकसान पहुंचाया है। टिहरी बांध को लेकर तो लंबा अभियान चला था। पर्यावरणविद और भू-वैज्ञानिक हिदायतें देते रहे हैं कि गंगा और हिमनदों से निकलने वाली सहायक नदियों की अविरल धारा बाधित हुई तो इनका पारिस्थितिकी तंत्र गड़बड़ा सकता है। लेकिन विकास के लिए ऐसी चेतावनियों को नजरअंदाज किया जाता रहा है। गौरतलब है कि 2013 में केदारनाथ दुर्घटना के बाद ऋषि-गंगा परियोजना पर भी बड़ा हादसा हुआ था। इस हादसे ने डेढ़ सौ लोगों के प्राण तो गए ही, संयंत्र भी पूरी तरह ध्वस्त हो गया था, जबकि इस संयंत्र का पनचानवे फीसद काम पूरा हो गया था।

उत्तराखंड में गंगा और उसकी सहायक नदियों पर एक लाख तीस हजार करोड़ रुपए की जल विद्युत परियोजनाएं निर्माणाधीन हैं। इन संयंत्रों की स्थापना के लिए लाखों पेड़ों को काट कर नदियों पर बांध बनाने के लिए गहरे गड्ढे खोदे जाते हैं और उन पर खंबे व दीवारें खड़ी की जाती हैं। इन गड्ढों की खोदाई में मशीनों से जो कंपन होते हैं, वे पहाड़ की परतों की दरारों को खाली कर देता है और पेड़ों की जड़ों से जो पहाड़ गुंथे होते हैं, उनकी पकड़ भी इस कंपन से ढीली पड़ जाती है। नतीजतन पहाड़ों के ढहने और हिमखंडों के टूटने की घटनाएं पूरे हिमालय क्षेत्र में लगातार बढ़ रही हैं।

राष्ट्रीय सहारा

Date:06-07-22

गंगा किनारे प्राकृतिक खेती

संपादकीय

पवित्र गंगा नदी के किनारे प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने की सरकार की योजना वाकई सराहनीय पहल मानी जाएगी। राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन (एनएमसीजी) 'अर्थ गंगा योजना' के तहत देश के किसानों को प्राकृतिक खेती की बारीकियों से रूबरू कराएगी। साथ ही चुने गए किसानों को अगले महीने प्रशिक्षण के लिए उन स्थानों पर भेजेगी, जहां सुनियोजित ढंग से प्राकृतिक खेती हो रही है। दरअसल, 'अर्थ गंगा योजना' के तहत प्राकृतिक खेती को लेकर काफी पहले से योजना

को अंतिम रूप दिया जा रहा था। गंगा किनारे खेती से सबसे महत्त्वपूर्ण लाभ यह होगा कि अटूट आस्था का केंद्र रही मां गंगा को गंदा होने से रोका जा सकेगा। लोग इसमें कूड़ा-कचरा डालने से हिचकेंगे। गंगा मैली कई वजहों से होती है। खासकर इसके किनारे रहने वालों के लिए नदी ही हर मर्ज की दवा होती है।

नतीजतन बड़ी संख्या में लोग इस नदी का दोहन और शोषण करने लग जाते हैं; बिना यह समझे-जाने कि ऐसा करने का सीधा नुकसान उन्हें ही उठाना पड़ेगा। जागरूकता के अभाव में लोग नदी की पवित्रता का ख्याल बिसरा देते हैं। इसके अलावा नदी के कुछेक किलोमीटर के दायरे में मौजूद फैक्टरियां रसायन का निस्तारण गंगा में ही करती हैं। ऐसे लोगों को रोकना निहायत जरूरी है। तकलीफ की बात है कि गंगा के प्रति अगाध श्रद्धा रखने के बावजूद गंगा समेत कई नदियों में गंदगी का अंबार है। स्वाभाविक तौर पर नदी की गंदगी को एक दिन में स्वच्छ और निर्मल नहीं किया जा सकता है, किंतु ऐसे कदम से निश्चित तौर पर गंगा को गंदा होने से बचाया जा सकेगा। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी 2014 में ही गंगा को साफ-सुथरा करने का ऐलान कर चुके हैं। 'नमामि गंगे' परियोजना का मकसद ही इस पवित्र जलधारा को स्वच्छ करने का रहा। इसके लिए भारी-भरकम बजट का भी प्रावधान किया गया। कुछेक जगहों पर यह परियोजना सफल भी रही, किंतु आहिस्ता-आहिस्ता जिम्मेदार लोग सुस्त होने लगे और एक अच्छी-खासी परियोजना दम तोड़ गई। अगर प्राकृतिक खेती के बहाने गंगा नदी को बेहतर बनाने की परिकल्पना जमीन पर उतारने का संकल्प लिया गया है तो इससे बढ़िया कुछ नहीं हो सकता। हो सके तो बाकी नदियों को लेकर भी ऐसी योजना सामने आए तो और अच्छा होगा। नदियों का हमारे जीवन में कितना महत्व है, इसे शब्दों में बयां करना मुश्किल है।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:06-07-22

भारतीय अर्थव्यवस्था को मजबूत आधार देते गांव

जयंतीलाल भंडारी, (अर्थशास्त्री)

देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में इस समय सुधार का परिदृश्य दिखाई दे रहा है। इस परिदृश्य के छह महत्वपूर्ण आधार हैं। एक, साल 2021-22 के सकल घरेलू उत्पाद, यानी जीडीपी के नए आंकड़ों के अनुसार कृषि क्षेत्र की मजबूत वृद्धि दर। दो, जन-धन योजना के जरिये छोटे किसानों व ग्रामीण गरीबों का सशक्तीकरण। तीन, कृषि क्षेत्र में ज्यादा उत्पादन और बेहतर मूल्य। चार, कृषि संबंधी नवाचारों व शोध से कृषि उन्नयन। पांच, ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए नई स्वामित्व योजना का विस्तार और छह, अच्छे मानसून का आगमन। अच्छे मानसून और खरीफ सत्र में अच्छी फसल की संभावना से ग्रामीण भारत का आशावाद ऊंचाई पर है और इसके रोजगार सूचकांक तेजी से रोजगार बढ़ने का ग्राफ प्रस्तुत कर रहे हैं।

वास्तव में, कोविड-19 की चुनौतियों के बीच पिछले तीन वर्षों में कृषि ही एकमात्र ऐसा क्षेत्र रहा है, जिसकी विकास दर नहीं घटी। वित्त वर्ष 2021-22 में कृषि क्षेत्र की वृद्धि दर तीन फीसदी रही है। इसमें रिकॉर्ड खाद्यान्न उत्पादन के साथ-साथ बागवानी, फूलों की खेती व पशुपालन जैसे क्षेत्रों का भी बड़ा योगदान है। चालू वित्त वर्ष 2022-23 में भी देश की जीडीपी में कृषि क्षेत्र का योगदान और अधिक बढ़ सकता है। इसमें कोई दो मत नहीं कि केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा ग्रामीण विकास, कृषि क्षेत्र और किसानों को सक्षम बनाने के लिए जो कदम उठाए जा रहे हैं, उनसे ग्रामीणों की आमदनी बढ़ने के साथ-साथ खाद्यान्न उत्पादन बढ़ने का ग्राफ ऊपर चढ़ता दिखाई दे रहा है। इसी 31 मई को गरीब कल्याण सम्मेलन कार्यक्रम के दौरान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा देश के 10 करोड़ से अधिक लाभार्थी किसान परिवारों के खातों में 21,000 करोड़ रुपये से अधिक की सम्मान निधि हस्तांतरित की गई। इस किस्त के साथ केंद्र अब तक किसानों के खातों में दो लाख करोड़ रुपये से अधिक की रकम ट्रांसफर कर चुका है।

ग्रामीण विकास और कृषि क्षेत्र में बढ़ते उत्पादन से देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सहारा मिल रहा है। हाल ही में पेश फसल वर्ष 2021-22 के तीसरे अग्रिम अनुमान के आंकड़ों के अनुसार, इस साल देश में कुल खाद्यान्न उत्पादन रिकॉर्ड 31.45 करोड़ टन होगा, जो पिछले वर्ष के मुकाबले 37.7 लाख टन अधिक है। हालांकि, गेहूं का उत्पादन पिछले साल के मुकाबले 31 लाख टन कम होने का अनुमान है, लेकिन चावल, मोटे अनाज, दलहन और तिलहन का रिकॉर्ड उत्पादन दिख रहा है। देश से खाद्यान्न का निर्यात लगातार बढ़ रहा है और यह विदेशी मुद्रा की कमाई का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन गया है। जहां दुनिया में भारत चावल का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक और पहले क्रम का निर्यातक देश है, वहीं गेहूं का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक व छठा बड़ा निर्यातक देश है। वित्त वर्ष 2021-22 में भारत ने करीब 2.1 करोड़ टन चावल और लगभग 70 लाख टन से अधिक गेहूं का निर्यात किया है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए स्वामित्व योजना अब एक नई आर्थिक शक्ति के रूप में दिखाई दे रही है।

हालांकि, ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण को अभी और कारगर प्रयासों की जरूरत है। सबसे पहले तो कृषि क्षेत्र में डिजिटलीकरण को तेजी से बढ़ावा देना होगा। किसानों को बेहतर तकनीक उपलब्ध कराने के साथ ही भूमि रिकॉर्ड के डिजिटलीकरण व कीटनाशकों के छिड़काव में ड्रोन तकनीक का अधिक उपयोग करने की जरूरत है। कृषि क्षेत्र से जुड़ी लैब (प्रयोगशाला) के सफल नतीजों को लैंड (जमीन) पर उतारने वाली 'लैब टु लैंड स्कीम' को व्यापक रूप से सफल बनाना होगा। इसके साथ ही खेती-किसानी में स्टार्टअप को बढ़ावा देने के लिए नाबार्ड की योजनाओं को कामयाब बनाने की जरूरत है। प्राकृतिक खेती को बढ़ाने के लिए हमें सीड टेक्नोलॉजी को तेजी से अपनाना होगा।

केंद्र सरकार ने चालू वित्त वर्ष में ग्रामीण विकास और कृषि क्षेत्र को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए जो योजनाएं घोषित की हैं, उम्मीद है कि उनके क्रियान्वयन में वह तेजी दिखाएगी। इससे न सिर्फ ग्रामीण विकास, बल्कि पूरी अर्थव्यवस्था को आगे बढ़ाने वाला नया अध्याय लिखा जा सकेगा।